विपश्यना

[साधकों का मासिक प्रेरणापत्र]

रजि. नं. १९१५६/७१

पोस्टल रजि. नं. NSK - 64

वर्ष ७ • बम्बई : बुद्धवर्ष २५२१ • आषाढ़ पूर्णिमा [शक] • दि. १-७-१९७७ • अंक १

"विपश्यना"

क्रियाप्रधान साधना मार्ग

(हेतु, पद्धति, अनुभव, विशेषताएं, परिणाम)

रतीलाल अध्वर्यु

भारत में सदियों से आत्म-कल्याण के लिए अनेक प्रकार की साधना पद्धतियां अस्तित्व में रही हैं। विपश्यना इनमें से एक है। इस साधना पद्धति ने आज तक देश-विदेश में बहुत अधिक प्रसिद्धि पायी है।

यह पद्धति प्रयोग-प्रधान है। इसीलिए असाधारण रीति से लाभदायी है। कम से कम शास्त्रीय ज्ञान, शारीरिक श्रम, आर्थिक खर्च और समय में अधिक से अधिक फायदा पहुंचाती है। अपने ही विकारों का स्वयं-शोधन, स्वयं ही उनका विरेचन, शमन और स्वयं ही अपनी सुषुप्त शक्तियों का उत्तम विकास इस साधना द्वारा अपने आप होता है।

विपश्यना साधना पद्धति जैन और बौद्ध संस्कृति की एक विशिष्ट देन है। प्रायोगिक ज्ञान और उस ज्ञान के आधार पर जीवन-दर्शन और उस दर्शन के आधार पर समझपूर्वक चारित्र्य ये तीनों ही इस साधना में व्याप्त हैं। शील, समाधि और ज्ञान इस साधना के आवश्यक अंग हैं। साधक को आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा, मोक्ष, तप आदि की भाव क्रियाएं इस साधना में वास्तविक रूप से दीख पड़ती हैं। तन और मन के स्थूल और सूक्ष्म अनुभवों से परिचय, उनका उपचार-यही है विपश्यना। इसी-लिए इसे आत्मानुभूति की प्रक्रिया भी कहते हैं।

स्वानुभव से यथार्थ दर्शन करने में ही इसकी शुरुआत होती है। कोई भी वस्तु, बनाव, घटना, प्रक्रिया, संवेदन हो उसे राग-द्वेषजन्य पूर्वाग्रह के एक लक्षीय दृष्टि से नहीं देखें बल्कि उसके कुदरती स्वरूप को तटस्थभाव से संवेदशीलता की दृष्टि से देखें। यही सम्यक दर्शन है। इस रीति से धीमे-धीमे स्थूल से शुरुआत करते है और अन्तर्मन की सूक्ष्म से सूक्ष्म वृत्तियों का भी तटस्थ दर्शन करने लगते हैं।

इस साधना में एकाग्रता जागृति और समता का भाव मुख्य है। जैसे-जैसे यह बढ़ते हैं, वैसे-वैसे राग, द्वेष, पूर्वाग्रह तथा इनसे उत्पन्न होने वाले मानसिक व शारीरिक रोग, विकार आदि घटते हैं, मिटते हैं।

धम्म वाणी

पुत्ताम'त्थि धनम'त्थि इति बालो विहञ्ञति।
अत्ता हि अत्तनो नत्थि कुतो पुत्ता कुतो धनं॥

धम्मपद ५।३

"मेरे पुत्र!" "मेरा धन!" – इस मिथ्या चिंतन में ही मूढ़ व्यक्ति तड़पता रहता है। अरे, जब यह तन और मन का अपनापा ही अपना नहीं है, तो कहां "मेरे पुत्र"? कहां "मेरा धन"?

हेतु राग, द्वेष, मोह, पूर्वाग्रह आदि विविध विकारों और वासनाओं के दुःखों से सदा के लिए संपूर्ण मुक्ति प्राप्त करनी। पूर्ण निर्विकारी वीतराग स्थिति उपलब्ध करनी ही इस साधना का लक्ष्य है।

साधना प्रयोग पंचशील धारण करके, श्वास-प्रश्वास के आवागमन को लक्ष्य बनाकर चित्त को जागरूक और एकाग्र करने के प्रयोग से इसकी शुरुआत की जाती है।

ध्यान के लक्ष्य में विक्षेप पैदा करने वाली ये निम्नलिखित सारी बातें पूर्णतया वर्जनीय हैं, त्याज्य हैं। जैसे — मंत्र, जप, आसन का आग्रह, प्राणायाम का आग्रह, प्रतीक, भजन, माला, वाचन-लेखन, कोई भी बाह्य आलंबन, सांसारिक चर्चा, विनोद, हास्य, व्यसन, दैनिक पत्र व अन्य पत्रिकाएं, सौंदर्य-प्रसाधन, नाटक, सिनेमा, देव-देवी, आत्मा-परमात्मा, चमत्कारी घटनाएं, दार्शनिक बुद्धिविलास आदि-आदि।

समय प्रातःकाल चार बजे से रात के दस बजे तक। बीच-बीच में आवश्यक दैनिक क्रियाओं के लिए विश्राम।

स्थल जहां तक हो सके एकाकी स्थल। सीधा प्रकाश और पंखे की हवा वर्जित।

प्रारंभ आते-जाते हुए सांस के प्रति चित्त को जाग्रत रखते हुए मन एकाग्र और व्यवस्थित किया जाता है। इस अभ्यास के दौरान भिन्न-भिन्न प्रकार की अनुभूतियों का परिचय होता है। लेकिन उनके मिथ्यात्व की बात भी समझ में आने लगती है। श्वास-प्रश्वास जैसा राग-द्वेष-विहीन तटस्थ आलंबन और कोई नहीं। इस क्रिया को आना-पान सती याने श्वास-प्रश्वास की स्मृति (जागरूकता) की साधना कहते हैं।

अनुभव आना-पान के प्रति जागृति का अभ्यास करते-करते चित्त एकाग्र होता है, स्थिर होता है तो उसके परिणाम स्वरूप अनेक प्रकार के अब तक अपरिचित लगने वाले अनुभव अपना परिचय देने लगते हैं। जैसे कि पसीजना, झनझनाना, रुदन, धूजन, सुगंध, दुर्गन्ध, सर्दी, गर्मी, कहीं कोई धीमा-मीठा या तेज दर्द, शारीरिक अवयवों में भारीपन, हल्कापन, प्रकाश, अंधकार, अनेक प्रकार की आवाजें, ठंडी, गर्म लहरें, अगम्य शब्द, आत्मिक आनंद, अनेक प्रकार की शारीरिक-मानसिक तरंगें, लहरें आदि-आदि।

इस प्रकार के अनुभवों के प्रति द्रष्टाभाव ही रखना होता है। इनका भोक्ता न बनें। साक्षीभाव से देखने लगें तो जानेंगे कि प्रत्येक संवेदना कैसे जागती है, विकसित होती है और अपने आप समाप्त भी हो जाती है। इसी प्रकार समग्र संसार के सारे बनाव बनते हैं, बिगड़ते हैं। उन्हें भी द्रष्टाभाव से देखने की क्षमता आने लगती है।

परिणाम शरीर और मन की इन भिन्न-भिन्न अनुभूतियों के समान ही संसार के प्रत्येक प्रसंग अपने स्वभाव से कुदरतन उत्पन्न होते हैं, विकसित होते हैं और नष्ट हो जाते हैं। हमें तो केवल प्रेक्षकभाव से संसार के इस नाटक को देखना है। कोई भी बात सिर पर भूत की तरह सवार न हो जाय। किसी भी दशा में हम स्थिति में डूब न जांय। हां, सजग रहकर जो करनीय है, वह अवश्य करें।

यह पद्धति प्रयोग प्रधान है, आचरण प्रधान है। इसलिए साधक अपने उच्च पुरुषार्थ द्वारा शीलवान, चरित्रवान व्यक्ति बनता है और परिणामतः एक आदर्श भद्र समाज का निर्माण करने में सहायक होता है। साधक का अन्तर्मन सदा निःस्वार्थ समतायुक्त, सरल, स्वच्छ, मैत्रीमय, करुणामय रहता है। वह सबका भला चाहता है। इसीलिए स्वयं शांतिलाभ कर अपना जीवन सफल बनता है। निम्न प्रकार के शारीरिक व मानसिक जकड़ से भी साधक मुक्त होता है। जैसे अनिद्रा रक्तचाप, निराशा, हीनभावना, हृदयरोग, मस्तिष्कशूल, चिंता, हिस्टीरिया, पागलपन आदि-आदि। इस साधना में चमत्कारों को कोई महत्व नहीं। पर अभ्यास करते-करते इंद्रियातीत अनुभव कइयों को होने लगते हैं। जैसे दिव्य प्रकाश, दिव्य नाद, दिव्य गंध, दिव्य स्पर्श, दिव्य तरंगे, अलौकिक आनंद अथवा अन्य कई प्रकार के विशिष्ट अनुभव।

यह पद्धति दो-ढ़ाई हजार वर्ष पूर्व के भारत में खूब प्रचलित थी। अभी ब्रह्मदेश, श्रीलंका, चीन, जापान आदि देशों में कुछ मात्रा में प्रचलित है।

प्रत्यक्ष लाभ आधुनिक उपचार पद्धतियाँ अक्सर रोग के लक्षण का ही उपचार करती हैं जिससे कि रोग उत्पन्न होने के मूलभूत कारण वैसे ही कायम रह जाते हैं। इससे प्रत्यक्ष रोग तो अवश्य दबता है परन्तु अन्य अप्रत्यक्ष रोग उत्पन्न होने लगते है। जैसे कि अनिद्रा, सिर दुखाव, अपच, मधुमेह, जीवन के प्रति असंतोष, हीन भावना, मानसिक अ-स्थिरता आदि आदि।

जीवन को यदि सही रीति से समझना आ जाय तो इस प्रकार के कोई रोग होते ही नहीं। यही नहीं; शील, समाधि और ज्ञान का अभ्यास करने लगें तो इस प्रकार के रोग हो भी गए तो अपने आप दूर हो जाते हैं।

विपश्यना ध्यान पद्धति के भारत में पुनरुद्धारक, प्रसारक, व्यापारी व उद्योगपति ब्रह्मदेशवासी श्री सत्यनारायणजी गोयन्का को स्वयं बचपन से ही माइग्रेन नाम का भयंकर सिर-दर्द का रोग था। यह सिरदर्द वर्ष में एक-दो बार सात-सात, आठ-आठ घंटे भयंकर पीड़ा देता था। पर जैसे-जैसे उम्र बढ़ी, दर्द का आक्रमण बार-बार होने लगा और एक-दो दिनों तक लगातार कष्ट देने लगा।

इस दर्द से छुटकारा पाने के लिए ब्रह्मदेश के अनेक डॉक्टरों का उपचार कराया गया, पर कोई इलाज नहीं हुआ। मोर्फिया का इंजेक्शन दिया जाने लगा, जो कि रोग के बाह्य लक्षणों को ढकने का ही एक प्रयोग था। लंबे अर्से के प्रयोग से उसका व्यसन लग जाने का भी खतरा था ही।

लगभग पांच वर्ष तक स्थानीय उपचारों से कोई सफलता न मिल पाने के कारण विदेशों की ओर ध्यान गया। स्विटजरलैंड, जर्मनी, अमेरिका, जापान के निष्णात विशेषज्ञ डॉक्टरों का उपचार कराया गया। पर वह भी कोई लाभ न पहुंचा सका। परदेशों से घर लौटने पर एक स्नेही ने विपश्यना का प्रयोग कर देखने की सलाह दी। उपाय तो घर-आंगन में ही था, पर मध्यकाल में आम जनता उसे भूल बैठी थी। कुछ एक बौद्ध मठों में परंपरा द्वारा अब तक जीवित था। ब्रह्मदेश के अकाउंटेंट जनरल ऊ बा खिन इस साधना पद्धति में निष्णात थे। पहले तो विश्वास ही नहीं जमता था कि

१) कहीं धर्म के नाम पर कोई पाखंड तो नहीं चल रहा।
२) श्री गोयन्काजी स्वयं हिन्दू और यह बौद्ध धर्म का विधि-विधान। कहीं कोई कठिनाई तो नहीं पैदा होगी।
३) यह निवृत्ति पथ का प्रयोग और वह स्वयं अत्यंत प्रवृत्तिशील व्यापारी-उद्योगपति।

छह मास की झिझक के बाद जब इस प्रयोग में से गुजरे तो ऊपर की तीनों शंकाएं निराधार साबित हुईं। पता चला कि यह साधना मानव जीवन को विशुद्ध करने की एक पद्धति है। जीवन जीने की एक कला है।

पच्चीस वर्ष का पुराना रोग मात्र १० दिनों की साधना से निर्मूल हुआ। उसके साथ-साथ अन्य अनेक मानसिक विकारों से, तनावों से छुटकारा मिला। वही श्री गोयन्काजी आज भारत भर में विपश्यना ध्यान-शिविर लगाते हैं और अपने जीवन का अधिकांश भाग साधकों को मार्गदर्शन देने में लगाते हैं। पिछले ८ वर्षों में उन्होंने भारत के भिन्न-भिन्न भागों में, १३८ शिविरों में हजारों साधकों की सेवा की है और सही माने में उनके कल्याणमित्र बने है। और अभी भी उनका यह प्रयोग चालू है। पश्चिम के अनेक युवक-युवतियां भी इसमें भाग लेकर लाभान्वित होते हैं।

पूज्य गुरुजी उम्र में उधेड़ होने पर भी एक नवयुवक को लज्जित कर दें, ऐसी शक्ति और सेवा भावना से विश्व को विशुद्धि का मार्ग बांटते हैं।

इस मार्ग का परिचय पाने योग्य है।

३, दीनदत्त सोसायटी,
अहमदाबाद-७.
(दैनिक पत्र "**सेवक**" (गुजराती) अहमदाबाद, से साभार)

विपश्यी कैदियों के उद्‌गार

..... सुबह से ही मन लगने लगा और नासिका में बड़ी ही मोहक खुशबू आने लगी। मैंने समझा कि किसी ने सेंट लगा रखा है। खुशबू काफी समय तक आती रही, मैं अभ्यास करता रहा। शाम को जब बैठा तो आंखो में रोशनी का अनुभव हुआ, और कानों में धूं-धूं की आवाज आने लगी।

सुबह ये अनुभूतियां गुरुजी को बताई। उन्होंने कहा कि यह अक्सर होता ही है– जब मन एकाग्र होना शुरू होता है। इसमें आसक्त मत हो जाना। यह तो जिस रास्ते पर चल रहे हो, उस रास्ते पर मील के पत्थर हैं, मार्ग की धर्मशालाएं हैं। तो मुझे बहुत ही खुशी हुई कि ठीक रास्ते पर चल पड़ा हूं और अभ्यास की निरंतरता जारी रखी। धीरेधीरे मन लगने लगा।

सिर से पांव तक सारे शरीर में संवेदनाओं को देखता रहा, फिर कभी घंटियों की सी आवाज आने लगी। मन शांत होने लगा और आनंद आने लगा। संवेदना वगैरह रोजाना होने लगी। .....मन लग गया और आनंद आने लगा। गुस्सा भी धीरे–धीरे कुछ कम पड़ने लगा। जीवन की चाल में कुछ फर्क पड़ने लगा। मैं हर आदेश को बड़ी कठोरता से पालन करने लगा। कोई खाना–पीना, उठना–बैठना नियम के विरुद्‌ध नहीं कर रहा था। स्वभाव में भी अन्तर आना शुरू हो गया। फिर मन में यह आने लगा कि जब कभी छूट कर मैं घर जाऊंगा तो मेरे माता–पिता को यह साधना जरूर दिलवाऊंगा। मैंने आखिर निश्चय कर लिया – मैं मेरे सारे परिवार को और दोस्तों को यह साधना जरूर–जरूर करवाऊंगा।

मैं सच्चे हृदय से श्रीमान होम–सेक्रेटरी साहब का बहुत ही आभारी हूं। क्योंकि इस नरक भूमि में भगवान मिलाया, सही मार्ग–दर्शक मिलाया। इनका मैं किन शब्दों में शुक्रगुजार करूं। जब भी मैं गुरुजी की दिव्य मुस्कान देखता था तो मन बड़ा प्रफुल्लित होता था। साक्षात् ज्ञान के भंडार गुरुजी ने कृतार्थ होने का मार्ग दर्शाया। मैं उनका जीवन–पर्यंत आभारी रहूंगा।

प्रतापसिंह–अपराध–कत्ल, सजा–आजीवन।

मुझे पंचशील बहुत ही अच्छे लगे। ..... हर साधक को इनका पालन करना चाहिए। इंसान को जीवनमुक्ति प्राप्त करने के लिए यह साधना कराई जाती है। अर्थात् इंसान दुःखों से छुटकारा प्राप्त कर सके; जिससे उनके हर दुख की जगह शांति प्राप्त हो सके। गुरुजी ने हमें बताया कि इंसान कैसा भी हो, जब तक उसमें बोधि ज्ञान या धर्म नहीं है तो वह जीवन के दुःखों से छुटकारा नहीं पा सकता। और उसका जीवन दुख से भरा रहता है।

मुझे इतनी शांति प्राप्त हुई है कि मैं हर शिविर में शामिल होना चाहता हूं जिससे कि खुद सफल होकर जन–सेवा कर सकूं। गुरुजी ने जनसेवा के लिए और अपनी मुक्ति के लिए जो रास्ता दिखाया वह बड़ा प्यारा है। हर मनुष्य से, प्राणी से प्यार करना, अपने अन्दर राग–द्वेष को न आने देना, अपने मन को अपने शरीर में ही रखना। कहीं बाहरी झंझटों में न उलझे, यह उन्होंने हमें सिखाया। मुझे बहुत ही अच्छा लगा और अपने मन की शांति प्राप्त हुई। दूसरों की सेवा करना याने जनसेवा करना भी मुक्ति का साधन है। अपना जीवन जनसेवा में लगाएं और खुद भी मुक्त हो जांय, यह भावना हममें जाग्रत की और लोगों के लिए प्यार की भावना हममें भर दी। और बताया कि हर इंसान से प्यार करो। ..... मुझे तो इतनी लगन हो गई कि हमेशा ही इस जीवन को ही मुक्त रखूंगा और मानव–सेवा करूंगा। हमारे मन में उमंग और जनता के प्यार की तरंगे उठने लगी हैं।

कर्णासिंह, अपराध–कत्ल, सजा बीस वर्ष।

इस शिविर में अन्तःकरण को शुद्ध बनाने का सनातन अभ्यास पुनर्जीवित कर अपने अंदर की समता की स्थिति को प्राप्त करना, मन के विकारों को एकाग्रचित्त होकर ढूंढ़ना तथा विपश्यना के माध्यम से निकालकर बाहर फेंकना, यह इस शिविर के माध्यम से अनूठा प्रयास है।

दस रोज में इस शिविर से हमें अन्दर की स्थिति को समझने का सुनहरा अवसर मिला। इस शिविर का उद्‌देश्य अन्तर्मन के विकारों को बाहर निकालाना और अपने मन को निरंतर स्वच्छ बनाए रखने का एक सुन्दर प्रयास है। हम इस कैम्प की प्रत्येक सच्चाइयों को और आगे बढ़ते देखना चाहते हैं, जिससे कि बंदी समाज का उत्थान होता रहे।

छितरलाल, अपराध–कत्ल, सजा बीस वर्ष।

मैंने कारागृह में लगे १० दिनों के शिविर में भाग लिया। शील का पालन एवं मानव–शत्रुओं से छुटकारा पाना सीखा। चित्त की एकाग्रता सीखकर शरीर की संवेदनाओं द्वारा विकारों को निकाल सका। अब इसका खूब अभ्यास करूंगा। सच्चे धर्म का मायना जाना तथा पूर्ण ज्ञान मिला। जीवन में सफलता मिली। सब को सच्चा सुख मिले। सब जीवन जीने की कला सीखें।

अमरसिंह, अपराध–हत्या, सजा–आजीवन।

बम्बई के साधक ध्यान दें

मरीनलाइन्स रेल्वे स्टेशन (प. रे.) के समीप "हिन्दी विद्या भवन" में रविवार की बजाय शनिवार की सायं ७ बजे से ८ बजे तक **सामूहिक साधना** का कार्यक्रम निश्चित किया गया है। समय पर पहुंचकर इसका लाभ उठाएं।

आगामी शिविर

शिविर क्रमांक १३९ **हदराबाद** (वि. अ. सा. केन्द्र) दिनांक १५–७–७७ से २६–७–७७ तक (हिन्दी)
" " १४० " " दिनांक २२–८–७७ से २–९–७७ तक (")

संपर्क :– श्री रतीलाल एम. मेहता, द्वारा–**विपश्यना अन्तर्राष्ट्रीय साधना केन्द्र**, कुसुम नगर, हैदराबाद ५०० ०३५
फोन नं. ५९२५९. तार–फूजीयामा।

शिविर क्रमांक १४१ **दार्जिलिंग** दिनांक २०–९–७७ से ३०–९–७७ तक (हिन्दी / अंग्रेजी)

संपर्क :–श्रीमती नीमा यांकी साण्डुप, ऑकलैंड हाउस, दार्जिलिंग (प. बंगाल) फोन १२९।

शिविर क्रमांक १४२ **दिल्ली** दिनांक १०–१०–७७ से २१–१०–७७ तक (हिन्दी)

संपर्क :– १) श्री. यशपाल जैन, द्वारा–सस्ता साहित्य मंडल, एन–७७ कन्नौट सर्कस, नई दिल्ली–११० ००१।
फोन आ. ४०५०५ घर–२७३२२६, तार–सत्साहित्य।

२) श्री. एच. एम. पेरीवाल, के–६, हौज खास, नई दिल्ली–११० ०१६। फोन ७७०३९।

नोट :– १) कृपया साधना शिविर में शामिल होने से पूर्व शिविर–व्यवस्थापक के पास अपना नाम रजिस्टर करा लें। किसी कारणवश शिविर में सम्मिलित न हो सकते हों तो कृपया पर्याप्त समय रहते सूचित करें ताकि किसी अन्य प्रत्याशी को स्वीकृति दी जा सके।

२) अंग्रेजी शिविर में हिन्दी प्रवचन सुनने हेतु हिन्दी टेप की सुविधा उपलब्ध रहेगी।

३) शिविरों के नियम कड़े होते हैं। उनका कड़ाई से पालन कर सकें तो ही भाग लेना चाहिए।

४) शिविर–स्थल के बारे में अथवा अन्य किसी प्रकार की पूछ–ताछ के लिए संबंधित व्यवस्थापक से संपर्क करें।

मेसर्स चौधरी रबर इण्डस्ट्रीज
४/१२, इण्डस्ट्रियल एस्टेट, बड़ौदा–३.
फोन नं. आ. ८५९२ घर ६४०८७
की मंगल कामनाओं सहित

मेसर्स परमानेंट मैगनेटस लि.,
२०, शहीद भगतसिंह मार्ग, फोर्ट, बम्बई–४०० ०२३.
फोन नं. २६९४११।
की मंगल कामनाओं सहित

दोहे धर्म के

तन पर, मन पर, प्राण पर, अपना ना अधिकार।
सम्पद पर, सन्तान पर, मिथ्या ही ममकार॥
देखत ही देखत छुटे, वैभव का संसार।
"मेरा मेरा" कर मरे, मनुज बड़ा लाचार॥
मदिरा भंग अफीम–मद, सब मद फीके होंय।
धन–मद पद–मद राज–मद, इनसा मद नहिं कोय॥
अहंकार का मद चढ़े, करे दीन पर चोट।
कुचले दुर्बल को सबल, बढ़े पाप की पोट॥
अहंकार मदमत्त हो, बोले कड़वे बोल।
मैत्री के माहौल में, देय विषम विष घोल॥
बोल न भावावेश में, असमय अनुचित बोल।
जब बोले तब समझ कर, तोल तोल कर बोल॥

दूहा धरम रा

अपणै अपणै सुपन मँ, सगळा उळझ्या आप।
के भायी के भायला, के बेटा के बाप॥
कूड़ कपट छळ छदम को, स्वार्थ भरयो संसार।
सरल स्वच्छ हिवड़ो कठै? कठै छलकतो प्यार?
या काजळ की कोठड़ी, बुझग्यो धरम चिराग।
ईं काळस सूं बच सकै, बिड़लो ही बेदाग॥
कंचन की या कामना, प्रभुता की या होड़।
छोड़ छोड़ रै बावळा! या दुख–पथ की दौड़॥
कीं उलझण मँ उलझग्यो? छोड़ बावळा छोड़।
ईं स्वारथ–रथ जगत सूं, बेगो ही मुख मोड़॥
कीं दलदल मँ धंस रयो, निकळ निकळ बलवान।
राख सहारो धरम को, धरम करै कल्यान॥

सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट के लिए संपादक मुद्रक प्रकाशक : **मधु काबरा**, सिलवेस्टर बिल्डिंग, २० शहीद भगतसिंह मार्ग बम्बई २३.
टेलीफोन : २६९४११, मुद्रण स्थान : **अक्षरचित्र मुद्रणालय** सातपुर, नासिक ४२२ ००७. टेलिफोन ८२५१
विज्ञापन : आधा पृष्ठ रू. ४००/–, चौथाई पृष्ठ रू. २००/–, वार्षिक शुल्क रू. ५/, आजीवन शुल्क रू. ५१/–

"विपश्यना"
पो. रजि. नं. NSK/64

प्रेषक :
विपश्यना विश्व विद्यापीठ
धम्मगिरि इगतपुरी, ४२२ ४०३.
(नासिक – महाराष्ट्र)

To